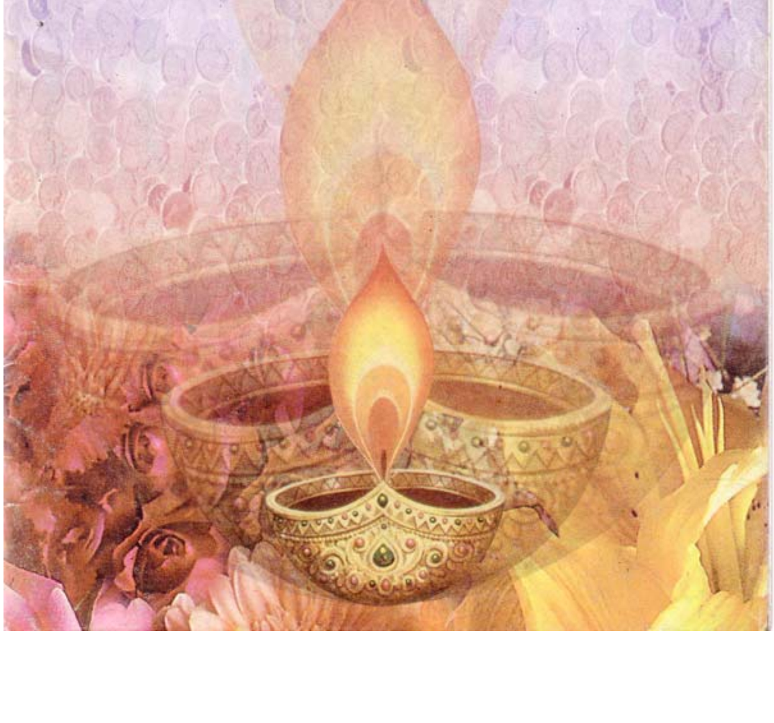
सदा दिवाली

आपका नूतनवर्ष मंगलमय हो...

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद
संत श्री आसारामजी बापू के
सत्संग-प्रवचन



अनुक्रम....

सदा दिवाली

धनतेरस, काली चौदस, दिवाली, नूतनवर्ष और भाईदूज.... इन पर्वों का पुञ्ज माने दिवाली के त्योहार। शरीर में पुरुषार्थ, हृदय में उत्साह, मन में उमंग और बुद्धि में समता.... वैरभाव की विस्मृति और स्नेह की सरिता का प्रवाह... अतीत के अन्धकार को अलविदा और नूतनवर्ष के नवप्रभात का सत्कार... नया वर्ष और नयी बात.... नया उमंग और नया साहस... त्याग, उल्लास, माधुर्य और प्रसन्नता बढ़ाने के दिन याने दीपावली का पर्वपुञ्ज।

नूतनवर्ष के नवप्रभात में आत्म-प्रसाद का पान करके नये वर्ष का प्रारंभ करें...

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वम्
सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम्।
यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यम्
तद् ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः।।

'प्रातःकाल में मैं अपने हृदय में स्फुरित होने वाले आत्म-तत्त्व का स्मरण करता हूँ। जो आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है, जो परमहंसों की अंतिम गति है, जो तुरीयावस्थारूप है, जो जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं को हमेशा जानता है और जो शुद्ध ब्रह्म है, वही मैं हूँ। पंचमहाभूतों से बनी हुई यह देह मैं नहीं हूँ।'

'जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति, ये तीनों अवस्थाएँ तो बदल जाती हैं फिर भी जो चिदघन चैतन्य नहीं बदलता। उस अखण्ड आत्म-चैतन्य का मैं ध्यान करता हूँ। क्योंकि वही मेरा स्वभाव है। शरीर का स्वभाव बदलता है, मन का स्वभाव बदलता है, बुद्धि के निर्णय बदलते हैं फिर भी जो नहीं बदलता वह अमर आत्मा मैं हूँ। मैं परमात्मा का सनातन अंश हूँ।' ऐसा चिन्तन करने वाला साधक संसार में शीघ्र ही निर्लेपभाव को, निर्लेप पद को प्राप्त होता है।

चित्त की मलिनता चित्त का दोष है। चित्त की प्रसन्नता सदगुण है। अपने चित्त को सदा प्रसन्न रखो। राग-द्वेष के पोषक नहीं किन्तु राग-द्वेष के संहारक बनो।

आत्म-साक्षात्कारी सदगुरु के सिवाय अन्य किसी के ऊपर अति विश्वास न करो एवं अति सन्देह भी न करो।

अपने से छोटे लोगों से मिलो तब करुणा रखो। अपने से उत्तम व्यक्तियों से मिलो तब हृदय में श्रद्धा, भक्ति एवं विनय रखो। अपने समकक्ष लोगों से व्यवहार करने का प्रसंग आने पर हृदय में भगवान श्रीराम की तरह प्रेम रखो। अति उद्दण्ड लोग तुम्हारे संपर्क में आकर बदल न पायें तो ऐसे लोगों से थोड़े दूर रहकर अपना समय बचाओ। नौकरों को एवं आश्रित जनों को स्नेह दो। साथ ही साथ उन पर निगरानी रखो।

जो तुम्हारे मुख्य कार्यकर्ता हों, तुम्हारे धंधे-रोजगार के रहस्य जानते हों, तुम्हारी गुप्त बातें जानते हों उनके थोड़े बहुत नखरे भी सावधानीपूर्वक सहन करो।

अति भोलभाले भी मत बनो और अति चतुर भी मत बनो। अति भोलेभाले बनोगे तो लोग तुम्हें मूर्ख जानकर धोखा देंगे। अति चतुर बनोगे तो संसार का आकर्षण बढ़ेगा।

लालची, मूर्ख और झगड़ालू लोगों के सम्पर्क में नहीं आना। त्यागी, तपस्वी और परहित परायण लोगों की संगति नहीं छोड़ना।

कार्य सिद्ध होने पर, सफलता मिलने पर गर्व नहीं करना। कार्य में विफल होने पर विषाद के गर्त्त में नहीं गिरना।

शस्त्रधारी पुरुष से शस्त्ररहित को वैर नहीं करना चाहिए। राज जानने वाले से कसूरमंद (अपराधी) को वैर नहीं करना चाहिए। स्वामी के साथ अनुचर को, शठ और दुर्जन के साथ सात्त्विक पुरुष को एवं धनी के साथ कंगाल पुरुष को वैर नहीं करना चाहिए। शूरवीर के साथ भाट को, राजा के साथ कवि को, वैद्य के साथ रोगी को एवं भण्डारी के साथ भोजन खाने वाले को भी वैर नहीं करना चाहिए। इन नौ लोगों से जो वैर या विरोध नहीं करता वह सुखी रहता है।

अति संपत्ति की लालच भी नहीं करना और संसार-व्यवहार चलाने के लिए लापरवाह भी नहीं होना। अक्ल, होशियारी, पुरुषार्थ एवं परिश्रम से धनोपार्जन करना चाहिए। धनोपार्जन के लिए पुरुषार्थ अवश्य करें किन्तु धर्म के अनुकूल रहकर। गरीबों का शोषण करके इकट्ठा किया हुआ धन सुख नहीं देता।

लक्ष्मी उसी को प्राप्त होती है जो पुरुषार्थ करता है, उद्योग करता है। आलसी को लक्ष्मी त्याग देती है। जिसके पास लक्ष्मी होती है उसको बड़े-बड़े लोग मान देते हैं। हाथी लक्ष्मी को माला पहनाता है।

लक्ष्मी के पास उल्लू दिखाई देता है। इस उल्लू के द्वारा निर्दिष्ट है कि निगुरों के पास लक्ष्मी के साथ ही साथ अहंकार का अन्धकार भी आ जाता है। उल्लू सावधान करता है कि सदा अच्छे पुरुषों का ही संग करना चाहिए। हमें सावधान करें, डाँटकर सुधारें ऐसे पुरुषों के चरणों में जाना चाहिए।

वाहवाही करने वाले तो बहुत मिल जाते हैं किन्तु तुम महान् बनो इस हेतु से तुम्हें सत्य सुनाकर सत्य परमात्मा की ओर आकर्षित करने वाले, ईश्वर-साक्षात्कार के मार्ग पर ले चलने वाले महापुरुष तो विरले ही होते हैं। ऐसे महापुरुषों का संग आदरपूर्वक एवं प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए। रामचन्द्रजी बड़ों से मिलते तो विनम्र भाव से मिलते थे, छोटों से मिलते तब करूणा से मिलते थे। अपने समकक्ष लोगों से मिलते तब स्नेहभाव से मिलते थे और त्याज्य लोगों की उपेक्षा करते थे।

जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए यह शास्त्रीय नियम आपके जीवन में आना ही चाहिए।

हररोज प्रभात में शुभ संकल्प करोः "मुझे जैसा होना है ऐसा मैं हूँ ही। मुझमें कुछ कमी होगी तो उसे मैं अवश्य निकालूँगा।" एक बार प्रयत्न करो.... दो बार करो..... तीन बार करो.... अवश्य सफल बनोगे।

'मेरी मृत्यु कभी होती ही नहीं। मृत्यु होती है तो देह की होती है....' ऐसा सदैव चिन्तन किया करो।

'मैं कभी दुर्बल नहीं होता। दुर्बल और सबल शरीर होता है। मैं तो मुक्त आत्मा हूँ... चैतन्य परमात्मा का सनातन अंश हूँ.... मैं सदगुरु तत्त्व का हूँ। यह संसार मुझे हिला नहीं सकता, झकझोर नहीं सकता। झकझोरा जाता है शरीर, हिलता है मन। शरीर और मन को देखने वाला मैं चैतन्य आत्मा हूँ। घर का विस्तार, दुकान का विस्तार, राज्य की सीमा या राष्ट्र की सीमा बढ़ाकर मुझे बड़ा कहलवाने की आवश्यकता नहीं है। मैं तो असीम आत्मा हूँ। सीमाएँ सब माया में हैं, अविद्या में हैं। मुझ आत्मा में तो असीमता है। मैं तो मेरे इस असीम राज्य की प्राप्ति करूँगा और निश्चिन्त जिऊँगा। जो लोग सीमा सुरक्षित करके अहंकार बढ़ाकर जी गये, वे लोग

भी आखिर सीमा छोड़कर गये। अतः ऐसी सीमाओं का आकर्षण मुझे नहीं है। मैं तो असीम आत्मा में ही स्थित होना चाहता हूँ....।'

ऐसा चिन्तन करने वाला साधक कुछ ही समय में असीम आत्मा का अनुभव करता है।

प्रेम के बल पर ही मनुष्य सुखी हो सकता है। बन्दूक पर हाथ रखकर अगर वह निश्चिन्त रहना चाहे तो वह मूर्ख है। जहाँ प्रेम है वहाँ ज्ञान की आवश्यकता है। सेवा में ज्ञान की आवश्यकता है और ज्ञान में प्रेम की आवश्यकत है। विज्ञान को तो आत्मज्ञान एवं प्रेम, दोनों की आवश्यकता है।

मानव बन मानव का कल्याण करो। बम बनाने में अरबों रुपये बरबाद हो रहे हैं। ....और वे ही बम मनुष्य जाति के विनाश में लगाये जाएँ ! नेताओं और राजाओं की अपेक्षा किसी आत्मज्ञानी गुरु के हाथ में बागडोर आ जाय तो विश्व नन्दनवन बन जाये।

हम उन ऋषियों को धन्यवाद देते हैं कि जिन्होंने दिवाली जैसे पर्वों का आयोजन करके मनुष्य से मनुष्य को नजदीक लाने का प्रयास किया है, मनुष्य की सुषुप्त शक्तियों को जगाने का सन्देश दिया है। जीवात्मा का परमात्मा से एक होने के लिए भिन्न-भिन्न उपाय खोजकर उनको समाज में, गाँव-गाँव और घर-घर में पहुँचाने के लिए उन आत्मज्ञानी महापुरुषों ने पुरुषार्थ किया है। उन महापुरुषों को आज हम हजार-हजार प्रणाम करते हैं।

यो यादृशेन भावेन तिष्ठत्यस्यां युधिष्ठिर।
हर्षदैन्यादिरूपेण तस्य वर्षं प्रयाति वै।।

वेदव्यासजी महाराज युधिष्ठिर से कहते हैं-
"आज वर्ष के प्रथम दिन जो व्यक्ति हर्ष में रहता है उसका सारा वर्ष हर्ष में बीतता है। जो व्यक्ति चिन्ता और शोक में रहता है उसका सारा वर्ष ऐसा ही जाता है।"

जैसी सुबह बीतती है ऐसा ही सारा दिन बीतता है। वर्ष की सुबह माने नूतन वर्ष का प्रथम दिन। यह प्रथम दिन जैसा बीतता है ऐसा ही सारा वर्ष बीतता है।

व्यापारी सोचता है कि वर्ष भर में कौन सी चीजें दुकान में बेकार पड़ी रह गईं, कौन सी चीजों में घाटा आया और कौन सी चीजों में मुनाफा हुआ। जिन चीजों में घाटा आता है उन चीजों का व्यापार वह बन्द कर देता है। जिन चीजों में मुनाफा होता है उन चीजों का व्यापार वह बढ़ाता है।

इसी प्रकार भक्तों एवं साधकों को सोचना चाहिए कि वर्ष भर में कौन-से कार्य करने से हृदय उद्विग्न बना, अशान्त हुआ, भगवान, शास्त्र एवं गुरुदेव के आगे लज्जित होना पड़ा अथवा अपनी अन्तरात्मा नाराज हुई। ऐसे कार्य, ऐसे धन्धे, ऐसे कर्म, ऐसी दोस्ती बन्द कर देनी चाहिए। जिन कर्मों के लिए सदगुरु सहमत हों और जिन कर्मों से अपनी अन्तरात्मा प्रसन्न हो, भगवान प्रसन्न हों, ऐसे कर्म बढ़ाने का संकल्प कर लो।

आज का दिन वर्षरूपी डायरी का प्रथम पन्ना है। गत वर्ष की डायरी का सिंहावलोकन करके जान लो कि कितना लाभ हुआ और कितनी हानि हुई। आगामी वर्ष के लिए थोड़े निर्णय कर लो कि अब ऐसे-ऐसे जीऊँगा। आप जैसे बनना चाहते हैं ऐसे भविष्य में बनेंगे, ऐसा नहीं। आज से ही ऐसा बनने की शुरुआत कर दो। 'मैं अभी से ही ऐसा हूँ।' यह चिन्तन करो। ऐसे न होने में जो बाधाएँ हों उन्हें हटाते जाओ तो आप परमात्मा का साक्षात्कार भी कर सकते हो। कुछ भी असंभव नहीं है।

आप धर्मानुष्ठान और निष्काम कर्म से विश्व में उथल पुथल कर सकते हैं। उपासना से मनभावन इष्टदेव को प्रकट कर सकते हैं। आत्मज्ञान से अज्ञान मिटाकर राजा खटवांग, शुकदेव जी और राजर्षि जनक की तरह जीवन्मुक्त भी बन सकते हैं।

आज नूतन वर्ष के मंगल प्रभात में पक्का संकल्प कर लो कि सुख-दुःख में, लाभ-हानि में और मान-अपमान में सम रहेंगे। संसार की उपलब्धियों एवं अनुपलब्धियों में खिलौनाबुद्धि करके अपनी आत्मा आयेंगे। जो भी व्यवहार करेंगे वह तत्परता से करेंगे। ज्ञान से युक्त होकर सेवा करेंगे, मूर्खता से नहीं। ज्ञान-विज्ञान से तृप्त बनेंगे। जो भी कार्य करेंगे वह तत्परता से एवं सतर्कता से करेंगे।

रोटी बनाते हो तो बिलकुल तत्परता से बनाओ। खाने वालों की तन्दरुस्ती और रूचि बनी रहे ऐसा भोजन बनाओ। कपड़े ऐसे धोओ कि साबुन अधिक खर्च न हो, कपड़े जल्दी फटे नहीं और कपड़ों में चमक भी आ जाये। झाड़ू ऐसा लगाओ कि मानो पूजा कर रहे हो। कहीं कचरा न रह जाये। बोलो ऐसा कि जैसा श्रीरामजी बोलते थे। वाणी सारगर्भित, मधुर, विनययुक्त, दूसरों को मान देनेवाली और अपने को अमानी रखने वाली हो। ऐसे लोगों का सब आदर करते हैं।

अपने से छोटे लोगों के साथ उदारतापूर्ण व्यवहार करो। दीन-हीन, गरीब और भूखे को अन्न देने का अवसर मिल जाय तो चूको मत। स्वयं भूखे रहकर भी कोई सचमुच भूखा हो तो उसे खिला दो तो आपको भूखा रहने में भी अनूठा मजा आयेगा। उस भोजन खाने वाले की तो

चार-छः घण्टों की भूख मिटेगी लेकिन आपकी अन्तरात्मा की तृप्ति से आपकी युगों-युगों की और अनेक जन्मों की भूख मिट जायेगी।

अपने दुःख में रोने वाले ! मुस्कुराना सीख ले।
दूसरों के दर्द में आँसू बहाना सीख ले।
जो खिलाने में मजा है आप खाने में नहीं।
जिन्दगी में तू किसी के काम आना सीख ले।।

सेवा से आप संसार के काम आते हैं। प्रेम से आप भगवान के काम आते हैं। दान से आप पुण्य और औदार्य का सुख पाते हैं और एकान्त व आत्मविचार से दिलबर का साक्षात्कार करके आप विश्व के काम आते हैं।

लापरवाही एवं बेवकूफी से किसी कार्य को बिगड़ने मत दो। सब कार्य तत्परता, सेवाभाव और उत्साह से करो। भय को अपने पास भी मत फटकने दो। कुलीन राजकुमार के गौरव से कार्य करो।

बढ़िया कार्य, बढ़िया समय और बढ़िया व्यक्ति का इन्तजार मत करो। अभी जो समय आपके हाथ में है वही बढ़िया समय है। वर्त्तमान में आप जो कार्य करते हैं उसे तत्परता से बढ़िया ढंग से करें। जिस व्यक्ति से मिलते हैं उसकी गहराई में परमेश्वर को देखकर व्यवहार करें। बढ़िया व्यक्ति वही है जो आपके सामने है। बढ़िया काम वही है जो शास्त्र-सम्मत है और अभी आपके हाथ में है।

अपने पूरे प्राणों की शक्ति लगा कर, पूर्ण मनोयोग के साथ कार्य करो। कार्य पूरा कर लेने के बाद कर्त्तापन को झाड़ फेंक दो। अपने अकर्त्ता, अभोक्ता, शुद्ध, बुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप में गोता लगाओ।

कार्य करने की क्षमता बढ़ाओ। कार्य करते हुए भी अकर्त्ता, अभोक्ता आत्मा में प्रतिष्ठित होने का प्रयास करो।

ध्यान, भजन, पूजन का समय अलग और व्यवहार का समय अलग... ऐसा नहीं है। व्यवहार में भी परमार्थ की अनुभूति करो। व्यवहार और परमार्थ सुधारने का यही उत्तम मार्ग है।

राग द्वेष क्षीण करने से सामर्थ्य आता है। राग-द्वेष क्षीण करने के लिए 'सब आपके हैं.... आप सबके हैं...' ऐसी भावना रखो। सबके शरीर पचंमहाभूतों के हैं। उनका अधिष्ठान, आधार

प्रकृति है। प्रकृति का आधार मेरा आत्मा-परमात्मा एक ही है। ॐ.... ॐ.... ॐ.... ऐसा सात्त्विक स्मरण व्यवहार और परमार्थ में चार चाँद लगा देता है।

सदैव प्रसन्न रहो। मुख को कभी मलिन मत होने दो। निश्चय कर लो कि शोक ने आपके लिए जगत में जन्म ही नहीं लिया है। आपके नित्य आनन्दस्वरूप में, सिवाय प्रसन्नता के चिन्ता को स्थान ही कहाँ है?

सबके साथ प्रेमपूर्ण पवित्रता का व्यवहार करो। व्यवहार करते समय यह याद रखो कि जिसके साथ आप व्यवहार करते हैं उसकी गहराई में आपका ही प्यारा प्रियतम विराजमान है। उसी की सत्ता से सबकी धड़कने चल रही हैं। किसी के दोष देखकर उससे घृणा न करो, न उसका बुरा चाहो। दूसरों के पापों को प्रकाशित करने के बदले सुदृढ़ बनकर उन्हें ढँको।

सदैव ख्याल रखो कि सारा ब्रह्माण्ड एक शरीर है, सारा संसार एक शरीर है। जब तक आप हर एक से अपनी एकता का भान व अनुभव करते रहेंगे तब तक सभी परिस्थितियाँ और आसपास की चीजें, हवा और सागर की लहरें तक आपके पक्ष में रहेंगी। प्राणीमात्र आपके अनुकूल बरतेगा। आप अपने को ईश्वर का सनातन अंश, ईश्वर का निर्भीक और स्वावलम्बी सनातन सपूत समझें।

स्वामी विवेकानन्द बार-बार कहा करते थेः

"पहले तुम भगवान के राज्य में प्रवेश कर लो, बाकी का अपने आप तुम्हे प्राप्त हो जायेगा। भाइयों ! अपनी पूरी शक्ति लगाओ। पूरा जीवन दाँव पर लगाकर भी भगवद राज्य में पहुँच जाओगे तो फिर तुम्हारे लिए कोई सिद्धि असाध्य नहीं रहेगी, कुछ अप्राप्य नहीं रहेगा, दुर्लभ नहीं रहेगा। उसके सिवाय सिर पटक-पटककर कुछ भी बहुमूल्य पदार्थ या ध्येय पा लिया फिर भी अन्त में रोते ही रहोगे। यहाँ से जाओगे तब पछताते ही जाओगे। हाथ कुछ भी नहीं लगेगा। इसलिए अपनी बुद्धि को ठीक तत्त्व की पहचान में लगाओ।"

जिस देश में गुरु शिष्य परंपरा हो, जिस देश में ऐसे ब्रह्मवेत्ताओं का आदर होता हो जो अपने को परहित में खपा देते हैं, अपने 'मैं' को परमेश्वर में मिला देते हैं। उस देश में ऐसे पुरुष अगर सौ भी हों तो उस देश को फिर कोई परवाह नहीं होती, कोई लाचारी नहीं रहती, कोई परेशानी नहीं रहती।

जहाँ देखो वहाँ स्थूल शरीर का भोग, स्थूल "मैं" का पोषण और नश्वर पदार्थों के पीछे अन्धी दौड़ लगी है। शाश्वत आत्मा का घात करके नश्वर शरीर के पोषण के पीछे ही सारी जिन्दगी, अक्ल और होशियारी लगायी जा रही है। पाश्चात्य देशों का यह कचरा भारत में बढ़ता

जा रहा है। उन देशों में अधिक से अधिक सुविधा-सम्पन्न कैसे हो सकते हैं, यही लक्ष्य है। वहाँ सुविधा और धन से संपन्न व्यक्ति को बड़ा व्यक्ति मानते हैं, जबकि भारत में आदमी कम-से-कम कितनी चीजों में गुजारा कर सकता है, कम-से-कम किन चीजों से उसका जीवन चल सकता है, यह सोचा जाता था। यहाँ ज्ञान संयुक्त त्यागमय दृष्टि रही है।

भारतीय संस्कृति और भारतीय तत्त्वज्ञान की ऐसी अदभुत संपत्ति है कि उसके आदर्श की हर कोई प्रशंसा करते हैं। आदमी चाहे कोई भी हो, किसी भी देश, धर्म, जाति और संप्रदाय का अनुयायी हो, वह निष्पक्ष अध्ययन करता है तो भारत की अध्यात्मविद्या एवं संस्कृति से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। घोर नास्तिक भी गीता के ज्ञान की अवहेलना नहीं कर सकता। क्योंकि गीता में ऐसे तत्त्वज्ञान और व्यवहारिक सन्देश दिये हैं जो हर बुजदिल को उन्नत करने के लिए, मरणासन्न को मुस्कान देने के लिए, अकर्मण्य पलायनवादी को अपने कर्तव्य-पथ पर अग्रसर करने के लिए सक्षम है।

पश्चिमी देशों में अति भौतिकवाद ने मानसिक अशान्ति, घोर निराशा आदि विकृतियों को खूब पनपाया है। विलासिता, मांस-मदिरा एवं आधुनिकतम सुविधाएँ मानव को सुख-शान्ति नहीं अपितु घोर अशान्ति प्रदान करती हैं तथा मानव से दानव बनाने का ही कारण बनती हैं। पश्चिमी देशों में संस्कृति के नाम पर पनप रही विकृतियों के ही कारण बलात्कार, अपहरण और आत्म हत्याओं की घटनाएँ दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही हैं। अध्यात्मशून्य जीवन से मानव का कल्याण असम्भव है, यह पश्चिमी देशों के अनेक विचारकों एवं बुद्धिजीवियों ने पचासों वर्ष पूर्व अनुभव कर लिया था। वे यह भली भाँति समझ गये थे कि अध्यात्मवाद और आस्तिकता के बिना जीवन व्यर्थ है। अनेक विदेशी विद्वान भौतिकवाद की चकाचौंध से मुक्त होकर अध्यात्मवाद की शरण में आये।

पत्रकार शिवकुमारजी गोयल अपने संस्मरणों में लिखते हैं किः

कई वर्ष पहले अमेरिका से एक सुशिक्षित एवं तेजस्वी युवक को ईसाई धर्म का प्रचार और प्रसार करने के उद्देश्य से भारत भेजा गया। इस प्रतिभाशाली एवं समर्पित भावनावाले युवक का नाम था सैम्युल एवन्स स्टौक्स।

भारत में उसे हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी इलाके में ईसाई धर्म के प्रचार का कार्य सौंपा गया। यह क्षेत्र निर्धनता और पिछड़ेपन से ग्रसित था। अतः पादरी स्टौक्स ने गरीब अनपढ़ पहाड़ी लोगों में कुछ ही समय में ईसाइयत के प्रचार में सफलता प्राप्त कर ली। उसने अपने प्रभाव और सेवा-भाव से हजारों पहाड़ियों को हिन्दू धर्म से च्युत कर ईसाई बना लिया। उनके

घरों से रामायण, गीता और अवतारों की मूर्तियाँ हटवाकर बाइबिल एवं ईसा की मूर्तियाँ स्थापित करा दीं।

एक दिन पादरी स्टौक्स कोटागढ़ के अपने केन्द्र से सैर करने के लिए निकले कि सड़क पर उन्होंने एक तेजस्वी गेरूए वस्त्रधारी संन्यासी को घूमते देखा। एक दूसरे से परिचय हुआ तो पता चला कि वे मद्रास के स्वामी सत्यानन्द जी हैं तथा हिमालय-यात्रा पर निकले हैं।

पादरी स्टौक्स विनम्रता की मूर्ति तो थे ही, अतः उन्होंने स्वामी से रात्रि को अपने निवास स्थान पर विश्राम कर धर्म के सम्बन्ध में विचार-विमर्श करने का अनुरोध किया, जिसे स्वामी जी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

स्वामी जी ने रात्रि को गीता का पाठ कर भगवान श्रीकृष्ण की उपासना की। स्टौक्स और उनका परिवार जिज्ञासा के साथ इस दृश्य को देखते रहे। रातभर गीता, अध्यात्मवाद, हिन्दू धर्म के महत्व और अतिभौतिकवाद से उत्पन्न अशान्ति पर चर्चा होती रही। स्टौक्स परिवार गीता की व्याख्या सुनकर गीता-तत्त्व से बहुत ही प्रभावित हुआ। भारत के अध्यात्मवाद, भारतीय दर्शन और संस्कृति की महत्ता ने उनकी आँखें खोल दीं। भगवान श्रीकृष्ण तथा गीता ने उनके जीवन को ही बदल दिया।

प्रातःकाल ही युवा पादरी स्टौक्स ने स्वामी जी से प्रार्थना कीः

"आप मुझे अविलम्ब सपरिवार हिन्दू धर्म में दीक्षित करने की कृपा करें। मैं अपना शेष जीवन गीता और हिन्दू धर्म के प्रचार में लगाऊँगा तथा पहाड़ी गरीबी की सेवा कर अपना जीवन धर्मपरायण भारत में ही व्यतीत करूँगा।"

कालान्तर में उन्होंने कोटगढ़ में भव्य गीता मन्दिर का निर्माण कराया। वहाँ भगवान श्रीकृष्ण की मूर्तियाँ स्थापित करायीं। बर्मा से कलात्मक लकड़ी मँगवाकर उस पर पूरी गीता के श्लोक खुदवाये। सेबों का विशाल बगीचा लगवाया। सत्यानन्द स्टौक्स अब भारत को ही अपनी पुण्य-भूमि मानकर उसकी सुख-समृद्धि में तन्मय हो गये। भारत के स्वाधीनता आन्दोलन में भी उन्होंने सक्रिय रूप से भाग लिया तथा छः मास तक जेल यातनाएँ भी सहन कीं। महामना मालवीयजी के प्रति उनकी अगाध निष्ठा थी।

उन्होंने देवोपासना, 'टू एवेकिंग इंडिया' तथा 'गीता-तत्त्व' आदि पुस्तकें लिखीं। उनकी 'पश्चिमी देशों का दिवाला' पुस्तक तो बहुत लोकप्रिय हुई, जिसकी भूमिका भी दीनबन्धु एंड्रूज ने लिखी थी।

महामना मालवीय जी ने एक बार उनसे पूछाः

"आप हिन्दुओं को धर्म परिवर्तन करा कर ईसाई बनाने के उद्देश्य से भारत आये थे, किन्तु स्वयं किस कारण ईसाई धर्म त्याग कर हिन्दू धर्म में दीक्षित हो गये?"

इस पर उन्होंने उत्तर दियाः

"भगवान की कृपा से मेरी यह भ्रान्ति दूर हो गई कि अमेरिका या ब्रिटेन भारत को ईसा का सन्देश देकर सुख-शान्ति की स्थापना और मानवता की सेवा कर सकते हैं। मानवता की वास्तविक सेवा तो गीता, हिन्दू धर्म और अध्यात्मवाद के मार्ग से ही सम्भव है। इसीलिए गीता-तत्त्व से प्रभावित होकर मैंने हिन्दू धर्म और भारत की शरण ली है।"

लेखकः श्री शिवकुमार गोयल

पत्रकार

वे ही देश, व्यक्ति और धर्म टिके हैं, शाश्वत प्रतिष्ठा को पाये हैं, जो त्याग पर आधारित हैं।

वर्त्तमान में भले कोई वैभवमान हो, ऊँचे आसन, सिंहासन पर हो, लेकिन वे धर्म, वे व्यक्ति और वे राज्य लम्बे समय तक नहीं टिकेंगे, अगर उनका आधार त्याग और सत्य पर प्रतिष्ठित नहीं है तो। जिनकी गहराई में सत्यनिष्ठा है, त्याग है और कम-से-कम भौतिक सुविधाओं का उपयोग करके ज्यादा-से-ज्यादा अंतरात्मा का सुख लेते हैं उन्हीं के विचारों ने मानव के जीवन का उत्थान किया है। जो अधिक भोगी है, सुविधासामग्री के अधिक गुलाम हैं वे भले कुछ समय के लिए हर्षित दिखें, सुखी दिखें, लेकिन आत्मसुख से वे लोग वंचित रह जाते हैं।

करीब दो हजार वर्ष पहले यूनान के एक नगर पर शत्रुओं ने आक्रमण कर दिया और वे विजयी हो गये। विजय की खुशी में उन्होंने घोषणा कर दीः "जिसको अपना जितना सामान चाहिए उतना उठाकर ले जा सकता है।"

सब नगरवासी अपना-अपना सामान सिर पर ढोकर जाने लगे। फिर भी बहुत कुछ सामान, माल मिल्कियत पीछे छूट रही थी। हताश, निराश, हारे, थके, उदास, मन्द, म्लान, चंचलचित्त लोग पीड़ित हृदय से जा रहे थे। उनमें एक तृप्त हृदयवाला, प्रसन्न चित्तवाला व्यक्ति अपनी शहनशाही चाल से चला जा रहा था। उसके पास कोई झोली-झण्डा, सर-सामान नहीं था। हाथ खाली, दिल प्रफुल्लित और आँखों में अनोखी निश्चिन्तता। आत्म-मस्ती के माधुर्य से दमकता हुआ मुख मण्डल। वह व्यक्ति था दार्शनिक बायस।

संसारी चीज वस्तुओं से अपने को सुखी-दुःखी मानने वाले नासमझ लोग बायस के सुख को क्या जाने? उनकी आत्मनिष्ठा और आत्ममस्ती को क्या जाने?

किसी ने बायस पर दया खाते हुए उनसे पूछाः

"अरे ! तुम्हारे पास कुछ भी सामान नहीं है? बिलकुल खाली हाथ? कितनी गरीबी ! भिखमंगों के पास अपना बोरी-बिस्तर होता है, गड़ा हुआ धन होता है। तुम्हारे पास कुछ भी नहीं है? इतनी दरिद्रता ! इतनी कंगालियत !"

आत्मारामी बायस ने कहाः

"कंगाल मैं नहीं हूँ। कंगाल तो वे लोग हैं जो मिटने वाली संपदा को अपनी संपदा मानते हैं और आत्म-संपदा से वंचित रहते हैं। मैं अपनी आत्म-संपदा पूरी की पूरी अपने साथ लिये जा रहा हूँ। मेरी इस संपदा को छीन नहीं सकता। उसे उठाने में कोई बोझ नहीं लगता। समता की सुरभी, शील का सामर्थ्य, अनंत ब्रह्मांडों में व्याप्त सत् चित् आनन्दस्वरूप, प्राणी मात्र का अधिष्ठान आत्मदेव है। उसी की सत्ता से सबकी धड़कने चलती हैं, सबके चित्त चेतना को प्राप्त होते हैं। उस आत्म-चैतन्य को मैं संपूर्णरूपेण प्राप्त होते हैं। उस पूर्ण संपदा से मैं पूर्ण तृप्त हुआ हूँ। मैं बेचारा नहीं हूँ। मैं कंगाल नहीं हूँ। मैं गरीब नहीं हूँ। बेचारे, कंगाल और गरीब तो वो लोग हैं जो मानवतन प्राप्त करके भी अपनी आत्म-संपदा से वंचित रहते हैं।"

शुकदेवजी, वामदेवजी, जड़भरतजी जैसे त्यागी महापुरुष बाहर से भले ऐसे ही अकिंचन दिखते हों, झोंपड़े में रहते हुए, कौपीन धारण किये हुए दिखते हों, किन्तु आत्मराज्य में उन्होंने प्रवेश किया है। वे स्वयं तो सुखी हैं, उनके अस्तित्व मात्र से वातावरण में सुख, शान्ति, आनन्द एवं रौनक छा जाती है।

सच्चे गुरु देना ही देना पसंद करते हैं और लेते हैं तो भी देने के लिए ही लेते हैं। लेते हुए दिखते हैं मगर वे ली हुई चीजें फिर घुमाफिरा कर उसी समाज के हित में, समाज के कार्य में लगा देते हैं।

ऐसे महापुरुष को अपनी अल्प मति से नापना साधक स्वीकार नहीं करता। उनका बाह्य व्यवहार मस्तिष्क में नहीं तौलता। उनके अंतर के प्रेम को झेलता है। अंतर के चक्षुओं को निहारता है और उनके साथ अंतरात्मा से सम्बन्ध जोड़ लेता है।

जो आत्मारामी ब्रह्मवेत्ताओं से दीक्षित होते हैं उन्हें पता है कि संसार के सारे वैज्ञानिक, सत्ताधीश, सारे धनवान लोग मिलकर एक आदमी को उतना सुख नहीं दे सकते जो सदगुरु निगाह मात्र से सत् शिष्य को दे सकते हैं।

वे सज्जन लोग जो सत्ताधीश हैं, वैज्ञानिक हैं, वे सुविधाएँ दे सकते हैं। गुरु शायद वे चीजें न भी दें। सुविधाएँ इन्द्रियजन्य सुख देती है।

कुत्ते को भी हलवा खाकर मजा आता है। वह इन्द्रियजन्य सुख है। किन्तु बुद्धि में ज्ञान भरने पर जो अनुभूति होती है वह कुछ निराली होती है। हलवा खाने का सुख तो विषय-सुख है। विषय-सुख में तो पशुओं को भी मजा आता है। साहब को सोफा पर बैठने में जो मजा आता है, सूअर को नाली में वही मजा आता है, एक मिस्टर को मिसिज से जो मजा आता है, कुत्ते को कुतिया से वही मजा आता है। मगर अन्त में देखो तो दोनों का दिवाला निकल जाता है।

इन्द्रियगत सुख देना उसमें सहयोग करना यह कोई महत्वपूर्ण सेवा नहीं है। सच्ची सेवा तो उन महर्षि वेदव्यास ने की, उन सतगुरुओं ने की, उन ब्रह्मवेत्ताओं ने की जिन्होंने जीव को जन्म-मृत्यु की झंझट से छुड़ाया.... जीव को स्वतंत्र सुख का दान किया.... दिल में आराम दिया.... घर में घर दिखा दिया.... दिल में दिलबर का दीदार करने का रास्ता बता दिया। यह सच्ची सेवा करने वाले जो भी ब्रह्मवेत्ता हों, चाहे प्रसिद्ध हों चाहे अप्रसिद्ध, नामी हों चाहे अनामी, उन सब ब्रह्मवेत्ताओं को हम खुले हृदय से हजार-हजार बार आमंत्रित करते हैं और प्रणाम करते हैं।

'हे महापुरुषों ! विश्व में आपकी कृपा जल्दी से पुनः पुनः बरसे। विश्व अशान्ति की आग में जल रहा है। उसे कोई कायदा या कोई सरकार नहीं बचा सकती।

हे आत्मज्ञानी गुरुओं ! हे ब्रह्मवेत्ताओं ! हे निर्दोष नारायण-स्वरूपों ! हम आपकी कृपा के ही आकांक्षी हैं। दूसरा कोई चारा नहीं। अब न सत्ता से विश्व की अशान्ति दूर होगी, न अक्ल होशियारी से, न शान्तिदूत भेजने से। केवल आप लोगों की अहेतुकी कृपा बरसे....।'

उनकी कृपा तो बरस रही है। देखना यह कि हम दिल कितना खुला रखते हैं, हम उत्सुक्ता से कितनी रखते हैं। जैसे गधा चन्दन का भार तो ढोता है मगर उसकी खुशबू से वंचित रहता है। ऐसे ही हम मनुष्यता का भार तो ढोते हैं लेकिन मनुष्यता का जो सुख मिलना चाहिए उससे हम वंचित रह जाते हैं।

आदमी जितना छोटा होगा उतना इन्द्रियगत सुख में उसे ज्यादा सुख प्रतीत होगा। आदमी जितना बुद्धिमान होगा उतना बाह्य सुख उसे तुच्छ लगेगा और अन्दर का सुख उसे बड़ा लगेगा। बच्चा जितना अल्पमति है उतना बिस्कुट, चॉकलेट उसे ज्यादा महत्वपूर्ण लगेगा। सोने

के आभूषण, हीरे-जवाहरात चखकर छोड़ देगा। बच्चा जितना बुद्धिमान होता जायगा उतना इन चीजों को स्वीकार करेगा और चॉकलेट, बिस्कुट आदि के चक्कर में नही पड़ेगा।

ऐसा ही मनुष्य जाति का हाल है। आदमी जितना अल्पमति है उतना क्षणिक सुख में, आवेग में, आवेश में और भोग में रम जाता है। जितना-जितना बुद्धिमान है उतना-उतना उससे ऊपर उठता है। तुम जितने तुच्छ भोग भोगते हो उतनी तुम्हारी मन-शक्ति, प्राणशक्ति दुर्बल होती है।

बच्चों की तरह अल्प सुख में, अल्प भोग में ही सन्तुष्ट नहीं होना है। गधा केवल चन्दन के भार को वहन करता है, चन्दन के गुण और खुशबू का उसे पता नहीं। ऐसे ही जिनकी देह में आसक्ति है वे केवल संसार का भार वहन करते हैं। मगर जिनकी बुद्धि, प्रज्ञा आत्मपरायण हुई है वे उस आत्मारूपी चन्दन की खुशबू का मजा लेते हैं।

अब इधर आ जाओ। तुम बहुत भटके, बहुत अटके और बहुत लटके। जहाँ धोखा ही धोखा खाया। अपने को ही सताया। अब जरा अपनी आत्मा में आराम पाओ।

लाख उपाय कर ले प्यारे कदे न मिलसि यार।
बेखुद हो जा देख तमाशा आपे खुद दिलदार।।

भगवान वेदव्यास ने और गुरुओं ने हमारी दुर्दशा जानी है इसलिए उनका हृदय पिघलता है। वे दयालु पुरुष आत्म-सुख की, ब्रह्म-सुख की ऊँचाई छोड़कर समाज में आये हैं।

कोई कोई विरले ही होते हैं जो उनको पहचानते हैं, उनसे लाभ लेते हैं। जिन देशों में ऐसे ब्रह्मवेत्ता गुरु हुए और उनको झेलने वाले साधक हुए वे देश उन्नत बने हैं। ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों की शक्ति साधारण मनुष्य को रूपांतरित करके भक्त को साधक बना देती है और समय पाकर वही साधक सिद्ध हो जाता है, जन्म-मरण से पार हो जाता है।

दुनिया के सब मित्र मिलकर, सब साधन मिलकर सब सामग्रियाँ मिलकर, सब धन-सम्पदा मिलकर भी मनुष्य को जन्म-मरण के चक्कर से नहीं छुड़ा सकते। गुरुओं का सान्निध्य और गुरुओं की दीक्षा बेड़ा पार करने का सामर्थ्य रखती है।

धन्यभागी हैं वे लोग जिनमें वेदव्यासजी जैसे आत्म-साक्षात्कारी पुरुषों को प्रसाद पाने की और बाँटने की तत्परता है।

हमें मर्द बनायें ऐसे आत्मज्ञानी मर्दों की इस देश को आवश्यकता है। दुर्बल विचार और दुर्बल विचारवालों का संग पाप है। सत्य सदा बलप्रद होता है। सच्चा बल वह है जो निर्बल को बलवान बनाये। निर्बल का शोषण करना आसुरी स्वभाव है। निर्बल को बलवान बनाना ब्रह्मवेत्ता का स्वभाव है।

संसार के बड़े-बड़े उद्योगों की अपेक्षा क्षणभर आत्मा-परमात्मा में स्थित होना अनन्तगुना हितकारी है। मनसूर, सुकरात, ईसा, मुसा, बुद्ध, महावीर, कबीर और नानक, इन सब महानुभावों ने अपने आत्मा-परमात्मा में ही परम सुख पाया था और महान हुए थे। आप भी पायें और महान् हो जाएँ।

शतं विहाय भोक्तव्यं सहस्रं स्नानमाचरेत्।
लक्षं विहाय दातव्यं कोटिं त्यक्त्वा हरिं स्मरेत्।।

'सौ काम छोड़कर भोजन कर लेना चाहिए, हजार काम छोड़कर स्नान कर लेना चाहिए, लाख काम छोड़कर दान कर लेना चाहिए और करोड़ काम छोड़कर हरि का भजन करना चाहिए।'

भयानक से भयानक रोग, शोक और दुःख के प्रसंगो में भी अगर अपनी आत्मा की अजरता, अमरता और सुख-स्वरूप का चिन्तन किया जाये तो आत्मशक्ति का चमत्कारिक अनुभव होगा।

हे अमर आत्मा ! नश्वर शरीर और सम्बन्धों में अपने को कब तक उलझाओगे? जागो अपने आप में। दुनिया की 'तू..तू...मैं-मैं...' में कई जन्म व्यर्थ गये। अब अपने सोऽहं रूप को पा लो।

मनुष्य का गौण कर्तव्य है ऐहिक सम्बन्धों का व्यवहार और मुख्य कर्तव्य है शाश्वत परमात्म-सम्बन्ध की जागृति और उसमें स्थिति। जो अपना मुख्य कर्तव्य निबाह लेता है उसका गौण कर्तव्य अपने आप सँवर जाता है।

सदाचार, परदुःखकातरता, ब्रह्मचर्य, सेवा और आत्मारामी संतों के सान्निध्य और कृपा से सब दुःखों की निवृत्ति और परमात्म-सुख की प्राप्ति सहज में होती है। अतः प्रयत्नपूर्वक आत्मारामी महापुरुषों की शरण में जाओ। इसी में आपका मंगल है, पूर्ण कल्याण है।

दुःख परमात्मा की ओर से नहीं आता, परमात्मा से विमुख होने पर आता है। अतः ईमानदारी, तत्परता और पूर्ण स्नेह से परमात्मा की ओर आओ.... अन्तर्मुख बनो.... परमात्म-सुख पाओ... सब दुःखों से सदा के लिए मुक्त हो जाओ।

देखना, सुनना, सूँघना, चखना, स्पर्श करना, शरीर का आराम, यश और मान.... इन आठ प्रकार के सुखों से विशेष परमात्म-सुख है। इन आठ सुखों में उलझ कर परमात्म-सुख में स्थिर होने वाला ही धन्य है।

सुख धन से नहीं, धर्म से होता है। सुखी वह होता है जिसके जीवन में धर्म होगा, त्याग होगा, संयम होगा।

पुरुषार्थ और पुण्यों की वृद्धि से लक्ष्मी आती है, दान, पुण्य और कौशल से बढ़ती है, संयम और सदाचार से स्थिर होती है। पाप, ताप और भय से आयी हुई लक्ष्मी कलह और भय पैदा करती है एवं दस वर्ष में नष्ट हो जाती है। जैसे रूई के गोदाम में आग लगने से सब रूई नष्ट हो जाती है ऐसे ही गलत साधनों से आये हुए धन के ढेर एकाएक नष्ट हो जाते हैं। उद्योग, सदाचार, धर्म और संयम से सुख देनेवाला धन मिलता है। वह धन 'बहुजन-सुखाय' प्रवृत्ति करवाकर लोक-परलोक में सुख देता है एवं चिर स्थायी होता है।

नूतनवर्ष के सुमंगल प्रभात में शुभ संकल्प करो कि जीवन में से तुच्छ इच्छाओं को, विकारी आकर्षणों को और दुःखद चिन्तन को अलविदा देंगे। सुखद चिन्तन, निर्विकारी नारायण का ध्यान और आत्मवेत्ताओं के उन्नत विचारों को अपने हृदय में स्थान देकर सर्वांगीण उन्नति करेंगे।

अपने समय को हल्के काम में लगाने से हल्का फल मिलता है, मध्यम काम में लगाने से मध्यम फल मिलता है, उत्तम काम में लगाने से उत्तम फल मिलता है। परम श्रेष्ठ परमात्मा में समय लगाने से हम परमात्म-स्वरूप को पा लेते हैं।

धन को तिजोरी में रख सकते हैं किन्तु समय को नहीं रख सकते। ऐसे मूल्यवान समय को जो बरबाद करता है वह स्वयं बरबाद हो जाता है। अतः सावधान ! समय का सदुपयोग करो।

साहसी बनो। धैर्य न छोड़ो। हजार बार असफल होने पर भी ईश्वर के मार्ग पर एक कदम और रखो.... फिर से रखो। अवश्य सफलता मिलेगी। संशयात्मा विनश्यति। अतः संशय निकाल दो।

अज्ञान की कालिमा को ज्ञानरश्मि से नष्ट कर आनन्द के महासागर में कूद पड़ो। वह सागर कहीं बाहर नहीं है, आपके दिल में ही है। दुर्बल विचारों और तुच्छ इच्छाओं को कुचल डालो। दुःखद विचारों और मान्यताओं का दिवाला निकालकर आत्म-मस्ती का दीप जलाओ। खोज लो उन आत्मारामी संतों को जो आपके सच्चे सहायक हैं।

सागर की लहरें सागररूप हैं। चित्त की लहरें चैतन्यरूप है। उस चैतन्यरूप का चिन्तन करते-करते अपने अथाह आत्म-सागर में गोता मारो।

खून पसीना बहाता जा।
तान के चादर सोता जा।
यह नाव तो हिलती जायेगी।
तू हँसता जा या रोता जा।।

संसार की लहरियाँ तो बदलती जाएँगी इसलिए हे मित्र ! हे मेरे भैया ! हे वीर पुरुष ! रोत, चीखते, सिसकते जिन्दगी क्या बिताना? मुस्कुराते रहो.... हरि गीत गाते रहो... हरि रस पीते रहो.... यही शुभ कामना।

अपने अंतर के घर में से काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार के कचरे को प्रेम, प्रकाश, साहस, ॐकार के गुँजन तथा गुरुमंत्र के स्मरण से भगा देना। अपने हृदय में प्रभुप्रेम भर देना। नित्य नवीन, नित्य नूतन आत्म-प्रकाश और प्रेम प्रसाद से हृदय में बस हुए हरि को स्नेह से सदा पूजते रहना। जहाँ नारायण हैं वहाँ महालक्ष्मी भी हैं।

रोज सुबह नींद से उठते समय अपने आरोग्य के बारे में, सत्प्रवृत्तियों के बारे में और जीवनदाता के साक्षात्कार के बारे में, प्रार्थना, प्रेम और पुरुषार्थ का संकल्प चित्त में दुहराओ। अपने दोनों हाथ देखकर मुँह पर घुमाओ और बाद में धरती पर कदम रखो। इससे हर क्षेत्र में कदम आगे बढ़ते हैं।

विश्वास रखोः आने वाला कल आपके लिए अत्यंत मंगलमय होगा। सदैव प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है।

वंशे सदैव भवतां हरिभक्तिरस्तु।

आपके कुल में सदैव हरिभक्ति बनी रहे। आपका यह नूतनवर्ष आपके लिए मंगलमय हो।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

अच्छी दिवाली हमारी

सभी इन्द्रियों में हुई रोशनी है।
यथा वस्तु है सो तथा भासती है।।
विकारी जगत् ब्रह्म है निर्विकारी।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी।।1।।
दिया दर्शे ब्रह्मा जगत् सृष्टि करता।
भवानी सदा शंभु ओ विघ्न हर्ता।।
महा विष्णु चिन्मूर्ति लक्ष्मी पधारी।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी।।2।।
दिवाला सदा ही निकाला किया मैं।
जहाँ पे गया हारता ही रहा मैं।।
गये हार हैं आज शब्दादि ज्वारी।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी।।3।।
लगा दाँव पे नारी शब्दादि देते।
कमाया हुआ द्रव्य थे जीत लेते।।
मुझे जीत के वे बनाते भिखारी।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी।।4।।
गुरु का दिया मंत्र मैं आज पाया।
उसी मंत्र से ज्वारियों को हराया।।
लगा दाँव वैराग्य ली जीत नारी।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी।।5।।
सलोनी, सुहानी, रसीली मिठाई।
वशिष्ठादि हलवाइयों की है बनाई।।
उसे खाय तृष्णा दुराशा निवारी।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी।।6।।
हुई तृप्ति, संतुष्टता, पुष्टता भी।
मिटी तुच्छता, दुःखिता दीनता भी।।
मिटे ताप तीनों हुआ मैं सुखारी।

मनी आज अच्छी दिवाली हमारी।।7।।

करे वास भोला ! जहाँ ब्रह्म विद्या।

वहाँ आ सके न अंधेरी अविद्या।।

मनावें सभी नित्य ऐसी दिवाली।

मनी आज अच्छी दिवाली हमारी।।8।।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम